मज़दूर लेबर कोड्स का विरोध क्यों कर रहे हैं?

सत्यवीर सिंह

2008 के पूंजीवादी आर्थिक संकट के बाद, देश के कॉर्पोरेट का 'श्रम सुधार' लाने का दबाव चरम पर पहुँच गयाथा. कांग्रेस ने कोशिश की लेकिन हिम्मत नहीं जुटा पाई. इसी का परिणाम था, कि देश में कॉर्पोरेट के, तब तक के लाड़ले प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह पर नीतिगत लकवा (policy paralysis) लाने का आरोप लगने लगा और 'दबंग' प्रधानमंत्री की तलाश शुरू हुई. गुजरात का मुख्यमंत्री रहते हुए ही, देश के सत्ताधारी पूंजीपति वर्ग का अगुवा और प्रभुत्वकारी तबक़ा, इजारेदार कॉर्पोरेट जान चुका था, कि इस काम के लिए मोदी जी ही चाहिएं. मोदी सरकार भी 'श्रम सुधार' लाने का साहस 2014 के अपने पहले कार्यकाल में नहीं जुटा पाई. 2019 चुनाव में, कॉर्पोरेट बिरादरी के असीमित धन और दरबारी मीडिया की मदद से, धार्मिक कट्टरता सह अंधराष्ट्रवाद के नशे की लहर पर सवार होकर भाजपा और बड़े बहुमत से सत्ता में आई. उसके बाद मोदी सरकार ने, कॉर्पोरेट हित के असली अजेंडे पर काम शुरू किया.

कृषि कानूनों के ज़रिए देश के सारे कृषि बाज़ार को कॉर्पोरेट को सोंपने के लिए 'कृषि बिल', और मज़दूरों के बेरोकटोक शोषण के लिए 'श्रम सुधार बिल' संसद में पास हुए. 'श्रम सुधार' का मतलब है, मज़दूरों ने सदियों की कुर्बानियों से जो अधिकार हांसिल किए, श्रम क़ानून बनवाए, उन्हें निरस्त कर देना. मालिकों को मज़दूरों के शोषण की खुली छूट दे देना.

जब ज़रूरत हो, मज़दूरों को काम पर लें, जो चाहें मज़दूरी दें, जितने घंटे चाहें उनसे काम लें, इसकी पूरी छूट होना. ना लेबर कोर्ट-कचहरी का चक्कर, ना यूनियन-संगठन की झंझट ना. बेरोकटोक 'हायर एंड फायर'! कुल 44 कानूनों को निरस्त कर, 4 लेबर कोड्स वजूद में आए. 'वेतन कोड बिल, 2019', सबसे पहले, 2 अगस्त 2019 को पास हुआ. जिन 4 कानूनों को रद्द कर वेतन कोड लाया गया है, वे हैं; 'वेतन के भुगतान का क़ानून, 1936', 'न्यूनतम वेतन क़ानून, 1948', बोनस भुगतान का क़ानून, 1965' तथा 'समान वेतन क़ानून, 1976'. आईये पड़ताल करें, इस 'श्रम सुधार' से क्या उल्लेखनीय बदलाव आएँगे, ऐसा करने के पीछे मोदी सरकार की असल मंशा क्या है. पहला बदलाव ये आएगा, कि कर्मचारी का मूल वेतन (Basic Pay) बढ़कर, कुल वेतन (Cost to Company) का 50त्न हो जाएगा. जिसका नतीज़ा ये होगा कि पीएफ, और दूसरी कटौतियां जो मूल वेतन से सम्बद्ध होती हैं, काफी बढ़ जाएंगी. अपना खर्च चलाने के लिए, कर्मचारी के हाथ में आने वाले वेतन में 15 से 20 प्रतिशत तक कटौती होगी. हालाँकि, सेवानिवृत्त पर मिलने वाली राशि बढ़ जाएगी.

पढ़ने में ये बात जितनी मामूली और सहज लगती है, असलियत में वैसी नहीं है. कर्मचारी भविष्य निधि संगठन (EPFO) की 2020- 21 की ऑडिटेड बैलेंस शीट के अनुसार, वह रक़म, जो कंपनियों ने पीएफ के नाम पर कर्मचारियों के वेतन से काटी है, लेकिन भविष्य निधि कोष में जमा नहीं की है, 11,152.50 करोड़ रुपये हो

गई है. मतलब, ऐसी कितनी ही कंपनियां हैं, जो कर्मचारियों के वेतन से पीएफ की कटौती करती हैं, लगभग उतनी ही रक़म कंपनी की ओर से उस कर्मचारी के पीएफ खाते में जमा करने की तो छोडिए, कर्मचारी से काटी गई रक़म को भी भविष्य निधि कोष में जमा नहीं करतीं, उसे डकार जाती हैं. भविष्य निधि कोष, इन कंपनियों से ये वसूली नहीं कर पा रहा. उसने, ऐसी कंपनियों की जानकारी आरटीआई में भी देने से टरका दिया है. पीएफ विभाग (EPFO) ने एक अलग खाता बनाया हुआ है, 'तुरंत वसूली असंभव (Not Immediately Realizable)'. 31 मार्च 2021 को इस खाते में 9837.30 करोड़ रुपये है. जुलाई महीने में फरीदाबाद में, लखानी की एक चप्पल बनाने वाली कंपनी के मज़दूरों ने आन्दोलन किया था, जिसमें वे चीख़-चीखकर कह रहे थे कि 3 महीने से वेतन नहीं मिला और 6 महीने का हमारा पीएफ का पैसा भी कंपनी खा गई. उसका क्या होगा? 'डबल इंजन' की सरकार, जो ग़रीबों से कोई वसूली ना हो पाए, तो बुलडोज़र लेकर चढ़ जाती है, वह इन कॉर्पोरेट अपराधियों से वसूली नहीं कर पा रही!! दैत्याकार बुलडोज़र इनकी कोठियों की दिशा में क्यों नहीं बढ़ते? भविष्यनिधि मामले का एक पहलू और भी संगीन है. 31 मार्च 2021 को भविष्य निधि कोष में मज़दूरों की कुल जमा राशि, 8,64,529.12 करोड़ रुपये हो गई. 2022 मार्च को ये रक़म 10 लाख करोड़ से ज्यादा हो गई, मार्च 2023 तक 12 लाख करोड़ से ज्यादा हो जाएगी. इस रक़म का एक हिस्सा, राज्यों को क़र्ज़ के रूप में दिया गया है. ज्यादातर राज्यों की हालत दिवालिया हो चुकी है. उनके कर्मचारियों के वेतन, शराब पर कर लगाने और ज़मीनों की ख़रीद-बिक्री पर लगने वाली स्टाम्प ड्यूटी की बदौलत ही मिल पा रहे हैं.

लोग शराब पीना छोड़ दें तो राज्यों के अधिकारी और मंत्री-संत्री भी भूखे मर जाएँ!! ऐसी हालत में राज्यों से मूल और ब्याज की वसूली हो पाएगी, ऐसा मुमकिन नहीं लगता. दूसरी ओर, इस कोष के काफी बड़े हिस्से के वित्तीय प्रबंधन की ज़िम्मेदारी मुकेश अम्बानी की कंपनी 'रिलायंस निप्पन लाइफ' (जापानी कंपनी निप्पन लाइफ से गठजोड़) को दी हुई है. ये कंपनी इस पैसे को शेयर मार्केट में लगा रही है. ऐसी मगरमच्छ कंपनियां, कैसा वित्तीय प्रबंधन करती हैं; क्या मोदी सरकार नहीं जानती?

वैसे भी आज, सरकारी रक़म अगर 12 लाख करोड़ से भी ऊपर निकल रही हो, तो उसे वित्तीय पूंजी की लपलपाती जीभ से बचाना असंभव है. जहाँ पहले ही इतनी रक़म गंभीर जोख़िम में हो, वहाँ उस राशि को और ज्यादा बढ़ाने (15 से 20 प्रतिशत) के क़ानून को संशय की नज़र से क्यों ना देखा जाए?

दूसरा परिणाम होगा, कर्मचारियों के हाथ में कम वेतन. ऐसी कमरतोड़ मंहगाई, घटता वेतन, असुरक्षित भविष्य, ना जाने मालिक कब बोल दे; 'सुन, कल से काम पर आने की ज़रूरत नहीं'. ऐसे में मज़दूर आज की रोटी की सोचे, या भविष्य की चिंता करे? रसोई गैस, डीज़ल, पेट्रोल के दाम बढ़ाते वक़्त क्या सरकार ये चिंता करेगी, कि वेतन कोड लागू होने पर मज़दूरों के हाथ में कम पैसे आएँगे; क्यों ना दाम बढ़ाने की बजाए, घटा दिए जाएँ?

तीसरा, बहुत गंभीर परिणाम वह होगा जिसे दबी जुबान में, घुमा-फिराकर बोला जा रहा है. 'मालिक अब मज़दूरों से 12 घंटे काम ले सकेगा', इस कड़वी-क्रूर हकीक़त को, इस जुमले का कवर देते हुए बोला जा रहा है, कि कई कंपनियां 5 दिन के सप्ताह की जगह 4 दिन का सप्ताह शुरू करेंगी जिससे कुल काम के घंटे उतने ही रहेंगे. और जो कंपनियां 4 दिन का सप्ताह ना करें, उनके लिए क्या कानून रहेगा?

जो कारखानेदार मज़दूरों को सप्ताह में 6 दिन या सातों दिन रगड़ते हैं, वे क्या दिन में सिर्फ़ 5 घंटे ही काम लेंगे??' श्रम सुधार' केअसल मायने क्या है, ये हकीक़त इस बदलाव से बाहर छलक जाती है कि किसी भी मज़दूर का 'आखिरी और अन्तिम हिसाब (Full & Final Settlement), उसे काम से निकाले जाने के 2 दिन में कर देना होगा. पहले इस काम के लिए 45 से 60 दिन का वक़्त हुआ करता था. देखिए, सरकार बहादुर मज़दूरों-कर्मचारियों की कितनी चिंता करती है!! वेतन कोड में लिखा है, "जब किसी कर्मचारी को, काम से हटा दिया गया है, या बरखाश्त कर दिया गया है, उसकी छंटनी कर दी गई है, उसने स्तीफा दे दिया है, या प्रतिष्ठान के बंद पड़ जाने से उसे रोज़गार देना संभव नहीं रह गया है, तब उसकी छंटनी, बरखाश्तगी, काम से हटा दिए जाने या उसके स्तीफा दे देने के 2 दिन के अन्दर, आखिरी हिसाब-किताब के अनुसार जो भी उसका लेना बनता है, वह उसे 2 दिन के अन्दर मिल जाना चाहिए." 'बरखास्तगी, छंटनी, काम से निकाल दिए जाने' की चिंता नहीं है, चिंता इस बात की है कि उसका 'आखिरी और अन्तिम हिसाब-किताब' तुरंत हो जाए!! ये तो वही हुआ, किसी को कहा जाए कि आपको फांसी दी जाएगी, लेकिन चिंता मत करो, फांसी का फंदा मखमल वाला, नरम, मुलायम रहेगा, आपको कोई कष्ट नहीं होने दिया जाएगा!!

पूरी ज़िन्दगी भयंकर अभाव में काटने वाले मज़दूर को, कई बार अडवांस वेतन लेना पड़ता है. असंगठित क्षेत्र के कुछ मज़दूर ऐसा इसलिए भी करते हैं, कि कई बार उन्हें काम करने के बाद, पैसे मिलते ही नहीं.

अभी तक, अडवांस वेतन अगर कम है, तो उसकी वसूली भुगतान की तारीख को ही हो जाती थी, लेकिन अगर रक़म ज्यादा है तो उसकी वसूली 10 महीने या एक साल में होती थी. जैसे 20,000 प्रति माह वेतन वाले मज़दूर को अगर 30,000 रु का अग्रिम भुगतान किया गया है, तो उसकी वसूली 3,000 प्रति माह के हिसाब से 10 महीने में हो जाएगी. अभी तक अग्रिम वेतन भुगतान पर कोई ब्याज देना नहीं होता था. वेतन कोड में ये प्रावधान है कि मालिक, मज़दूर को दिए गए अग्रिम वेतन पर ब्याज ले सकता है. वह कितना होगा ये कहीं नहीं लिखा है. मतलब ब्याज कितना भी हो सकता है.

इसे पढ़ते ही प्रेमचंद की कालजयी कहानी 'सवा सेर गेहूं' याद आ जाती है. जब किसान, जमींदार से सवा सेर गेहूं उधार लेता है और फिर पीढ़ियों तक उसे बेगार करनी पड़ती है, और वह क़र्ज़ उतरता ही नहीं. आज भी कितने ही सूदखोर हैं, जो ज़रूरतमंद गरीबों से महीने का 5 प्रतिशत तक ब्याज ऐंठते हैं. कितनी ही आत्म हत्याएं इन्हीं सूदखोरों के दमन चक्र में फंसने से होती हैं. कई क्षेत्र ऐसे हैं, जैसे भट्टे में या खेती में काम करने वाले मज़दूर, जो आज भी इसलिए बंधुआ मज़दूर जैसे जिंदगी जीने को मज़बूर हैं, क्योंकि उन्हें अग्रिम पैसे लेने पड़े थे. वेतन कोड के माध्यम से सरकार द्वारा प्रस्तावित ये बदलाव क्या उसी अमानवीय श्रेणी में नहीं गिना जाना चाहिए. इससे ये भी साबित होता है कि मालिकों द्वारा मज़दूरों को निचोड़ने की प्रक्रिया को ज़ारी रखने के लिए सरकारी बाबू कितना बारीक़ अध्ययन करते हैं. शिकागो के अमर शहीदों ने, सन 1886 में, अपनी जान, '8 घंटे काम, 8 घंटे आराम और 8 घंटे मनोरंजन' का अधिकार हांसिल करने के लिए क़ुर्बान की थी. मई दिवस उसी जीत की ख़ुशी में मनाया जाता है.

मौजूदा काल, मज़दूरों के हौंसले और हिम्मत को ललकार रहा है. मज़दूरों को आज तक जो भी मिला है, भारी क़ीमत चुकाने पर ही है, कुछ भी खैरात में नहीं मिला. इतिहास, आज, मज़दूर वर्ग के सम्मुख वैसी ही चुनौती पेश कर रहा है, जैसी 1886 में की थी. दमन चक्र कभी भी ख़ुद नहीं रुकता. उसे रोकना पड़ता है. फ़ासिस्ट सरकार उतनी बलशाली, अजेय नहीं होती जितनी वह दिखती है, ये बात देश के बहादुर किसान साबित कर चुके हैं. चारों लेबर कोड का कार्यान्वयन भी मोदी सरकार पीछे खिसकाती जा रही है, क्योंकि वह डर रही है कि इनका हस्र भी कृषि कानूनों जैसा ही ना हो जाए. ऐसा हुआ तो वह अपने आकाओं, अडानी-अम्बानियों को क्या मुंह दिखाएगी. मज़दूरों को ये जानना भी बहुत ज़रूरी है कि किसान भी छोटी पूंजी के मालिक होते हैं, जिसे खोने का डर उनकी लड़ाई को कमजोर करता रहता है.

मज़दूर के पास, इस ज़ालिम पूंजीवादी-साम्राज्यवादी- फासीवादी व्यवस्था ने, बेड़ियों के सिवाय, खोने को कुछ छोड़ा ही नहीं है. सर्वहारा वर्ग ही है जो तेज़ गति से बढ़ता जा रहा है. मध्यम वर्ग पिघलकर उसमें समाता जा रहा है. किसान ख़ुद के लिए मेहनत करता है. उसके 13 महीने तक दिल्ली की सीमाओं पर बैठे रहने से सत्ताधारी वर्ग का कोई आर्थिक नुकसान नहीं हुआ. एक बार भी मीडिया ने याद नहीं दिलाया कि 13 महीने के धरने से देश की अर्थव्यवस्था को कितने करोड़ का नुकसान हुआ. मज़दूर के श्रम की चोरी से सत्ताधारी वर्ग की तिजोरियां भरती हैं. इसीलिए वे एक दिन भी हड़ताल करें, तो अगले दिन अख़बार की हेड लाइन बता रही होती है कि इससे देश को कितने हज़ार करोड़ का नुकसान हुआ. 'देश को' मरताब सरमाएदार वर्ग को!!

मज़दूर अपने हाथ सिकोड़ लेता है, तो मालिक की धमनियों में रक्त बहना बंद हो जाता है. आने वाला युग सर्वहारा वर्ग का है. कार्यान्वयन पीछे धकेलवाना काफ़ी नहीं, उसे सदियों की क़ुर्बानियों से हांसिल अपने अधिकारों को बहाल और चारों लेबर कोड्स को रद्द कराना ही होगा.

"मजदूर वर्ग की मुक्ति की लड़ाई स्वयं मजदूरों को जीतनी होती है" - 1866 को प्रथम इंटरनेशनल की नियमावली बनाते समय, विश्व सर्वहारा के महानतम नेता और शिक्षक कार्ल मार्क्स की ये बहुमूल्य सीख मज़दूरों को हमेशा याद रखनी होगी।